



छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर
विविध दायिक याचिका क्रमांक 2774/2024

- 1- नितिन जैन, पिता जेठमल जैन, आयु लगभग 33 वर्ष, निवासी ग्राम-कोमाखान, थाना-कोमाखान, तहसील एवं जिला-महासमुंद (छ.ग.)
- 2- निक्की जैन, पिता जेठमल जैन, आयु लगभग 30 वर्ष, निवासी ग्राम-कोमाखान, थाना-कोमाखान, तहसील एवं जिला-महासमुंद (छ.ग.)
- 3- अमरजीत छाबड़ा, पिता अमरीक सिंह छाबड़ा, आयु लगभग 61 वर्ष, निवासी वार्ड नंबर 11, खरियार रोड, थाना-जोंक, तहसील एवं जिला-नुआपाड़ा (ओडिशा) (चालान अनुलग्नक पी/2 के अनुसार जिला सही रूप से उल्लेखित है)

... आवेदकगण

विरुद्ध

- 1- छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा- थाना कोमाखान, जिला-महासमुंद (छ.ग.)
- 2- जावेद मोहम्मद कुरैशी, पिता स्व. हनीफ मोहम्मद कुरैशी, आयु लगभग 26 वर्ष, निवासी ग्राम-बोइसांव, थाना-कोमाखान, जिला-महासमुंद (छ.ग.)

... अनावेदकगण

आवेदकगण की ओर से : श्री डी.के. ग्वालरे, अधिवक्ता

अनावेदकगण की ओर से : सुश्री मांडवी भारद्वाज, पैनल अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्ति श्री रवींद्र कुमार अग्रवाल, न्यायाधीश

बोर्ड पर आदेश

16.10.2024

1. वर्तमान याचिका याचिकाकर्तागण द्वारा, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (संक्षिप्त में "बीएनएसएस") की धारा 528 के अधीन, विद्वान द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, महासमुंद, जिला महासमुंद द्वारा सत्र प्रकरण क्रमांक 24/2024 में दिनांक 23-09-2024 को पारित आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके माध्यम से याचिकाकर्तागण द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन प्रकरण उन्मोचित करने हेतु प्रस्तुत आवेदन को खारिज कर दिया गया है।



2. प्रकरण के संक्षिप्त तथ्य, जैसा कि याचिका के साथ संलग्न अभिवचनों और दस्तावेजों से प्रकट होते हैं, यह है कि हनीफ मोहम्मद कुरैशी नामक व्यक्ति ने दिनांक 11-08-2019 को ग्राम बोइरगांव, जिला महासमुंद स्थित शाला परिसर के एक पेड़ पर फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली थी। मृतक के पुत्र अर्थात् जावेद मोहम्मद कुरैशी द्वारा पुलिस को मर्ग की सूचना दी गई थी, जिसके बाद मर्ग जांच शुरू की गई। मृतक के पैंट की बाईं जेब से एक सुसाइड नोट भी बरामद हुआ है, जिसमें वर्तमान याचिकाकर्तागण के नाम हैं और आरोप लगाया गया है कि मृतक ने याचिकाकर्ता नितिन जैन और निक्की जैन की दुकान से 26,000/- रुपये का किराना सामान खरीदा था और उन्हें 40-45 हजार रुपये जमा करने के बावजूद, फिर से 5-6 हजार रुपये बकाया होने का दावा किया जा रहा है। आगे, याचिकाकर्ता अमरजीत छाबड़ा के खिलाफ यह आरोप है कि अमरजीत छाबड़ा की दुकान से खरीदे गए कपड़ों की बकाया राशि 15-16 हजार रुपये के बजाय, वह उससे 30-35 हजार रुपये की मांग कर रहा था और भुगतान के लिए उसे तंग कर रहा था, और उनके द्वारा तंग किए जाने के कारण उसने आत्महत्या कर ली।

3. मर्ग जाँच के दौरान, मृतक के पुत्र, पत्नी और अन्य साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए, जिसमें उन्होंने कथन किया है कि मृतक गाँव में एक छोटी किराने की दुकान और रेडीमेड कपड़ों की चलती-फिरती दुकान चलाता था; वह वर्तमान याचिकाकर्तागण से ही किराना और कपड़े खरीदता था। पिछले वर्ष, जब वह अपनी मजदूरी लेकर घर लौट रहा था, तब रास्ते में याचिकाकर्ता नितिन जैन ने उसे रोका और यह कहते हुए उससे 1,100/- रुपये छीन लिए कि उसके पिता उसके कर्जदार हैं, और उसे गाली दी। जब उसने इस तथ्य के बारे में अपने पिता से पूछा, तो उन्होंने बताया कि उन्होंने नितिन जैन की दुकान से 26,000/- रुपये का किराना सामान उधार खरीदा था और विभिन्न किस्तों में 40-45 हजार रुपये का भुगतान कर दिया था। पिछले वर्ष, जब वह रेलवे स्टेशन जा रहा था, तब रास्ते में याचिकाकर्ता नितिन जैन उन्हें अपनी दुकान पर ले गया, मोटरसाइकिल की चाबियाँ छीन लीं और 40,000/- रुपये के ऊपर 20,000/- रुपये अतिरिक्त भुगतान करने को कहा। इसी कारण से उनकी किराने की दुकान बंद हो गई और उन्होंने कपड़ों का व्यवसाय शुरू किया, जिसके लिए वे अमरजीत छाबड़ा की दुकान से कपड़े खरीदते थे। उसने (अमरजीत छाबड़ा) भी उसे धमकी दी कि उसके पिता पर 2.5 लाख रुपये का कर्ज है और उसका पुनर्भुगतान करने को कहा, अन्यथा 3-4 दिनों के भीतर 30-40 हजार रुपये चुकाने को कहा। जब उसने फिर से अपने पिता से पूछा, तो उन्होंने बताया कि उन्होंने अमरजीत छाबड़ा की दुकान से 17,000/- रुपये के कपड़े उधार खरीदे थे, लेकिन वह इसके भुगतान के लिए उन्हें तंग कर रहा है। वह बार-बार टेलीफोन कॉल करके उन पर दबाव बना रहा है और उन्हें गाली दे रहा है तथा धमकियाँ दे रहा है। दिनांक 11-08-2019 को जब उसके पिता घर नहीं लौटे, तो उन्होंने उनकी तलाश शुरू की, और तब सलीम दादा ने उसे सूचित किया कि उसके पिता ने शाला परिसर में एक पेड़ से लटककर आत्महत्या कर ली है; उसे उनका शव मिला और उसने पुलिस में रिपोर्ट दर्ज कराई।



4. इस प्रकरण में दिनांक 14-08-2019 को प्रथम सूचना प्रतिवेदन पंजीबद्ध किया गया। विवेचना के उपरांत, पुलिस द्वारा याचिकाकर्तागण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 306 एवं 34 के अधीन अपराध के लिए अभियोग-पत्र प्रस्तुत किया गया है।

5. प्रकरण की कार्यवाही के दौरान, याचिकाकर्तागण ने दिनांक 02-07-2024 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन प्रकरण से उन्मोचित करने हेतु एक आवेदन प्रस्तुत किया। अपने आवेदन में उन्होंने निवेदन किया कि अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जो प्रथम दृष्टया भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अपराध के घटकों को संतुष्ट करती हो। मृतक द्वारा की गई कथित अपराध/आत्महत्या के साथ याचिकाकर्तागण का कोई संबंध नहीं है। उनके द्वारा मृतक को बेचे गए सामान की राशि की मांग करना, आत्महत्या के लिए उकसाने या दुष्प्रेरण के दायरे में नहीं आता है। यह एक साधारण व्यापारिक संव्यवहार था, जो गाँवों में सामान्य बात है। मृतक की मृत्यु और याचिकाकर्तागण के किसी भी कृत्य के मध्य कोई सन्निकट संबंध नहीं था। अतः, याचिकाकर्तागण को इस अपराध से उन्मोचित किया जाए।

6. विद्वान विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को सुनने के पश्चात, अपने आदेश दिनांक 23-09-2024 के माध्यम से याचिकाकर्तागण के आवेदन को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि प्रकरण के विचारण को आगे बढ़ाने हेतु अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हैं। न्यायालय को केवल यह देखना है कि विवेचना के दौरान एकत्रित सामग्री से प्रकरण को आगे बढ़ाने हेतु प्रथम दृष्टया साक्ष्य उपलब्ध हैं या नहीं। न्यायालय के लिए अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों की सूक्ष्मतापूर्वक परीक्षण करना आवश्यक नहीं है, बल्कि आरोप विरचित करने हेतु साक्ष्यों की केवल छंटनी और उनका मूल्यांकन करना आवश्यक है। वर्तमान याचिका में दिनांक 23-09-2024 के आदेश को चुनौती दी गई है।

7. याचिकाकर्तागण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि विद्वान विचारण न्यायालय इस तथ्य पर विचार करने में असफल रहा है कि अभियोजन द्वारा अभियोग-पत्र के साथ प्रस्तुत सामग्री से याचिकाकर्तागण के विरुद्ध कोई प्रथम दृष्टया प्रकरण नहीं बनता है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि यदि अभियोग-पत्र में लगाए गए निर्विवाद आरोपों को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया जाए, तब भी याचिकाकर्तागण के विरुद्ध आरोप विरचित करने और प्रकरण के विचारण को आगे बढ़ाने के लिए आत्महत्या हेतु उकसाने या दुष्प्रेरण का कोई अपराध प्रथम दृष्टया नहीं बनता है। मृतक को बेचे गए सामान की राशि का भुगतान करने के लिए कहना, आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण या उसे उकसाने की कोटि में नहीं आता है। मृतक की आत्महत्या और याचिकाकर्तागण के मध्य कोई सन्निकट संबंध नहीं है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि मृतक भारी कर्ज में डूबा हुआ था और अवसाद में था, जिसके कारण उसने आत्महत्या की। उन्होंने आगे तर्क दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध के लिए किसी कार्य को करने के लिए उकसाने, प्रेरित करने, आगे बढ़ाने, उत्तेजित करने, प्रोत्साहन या बढ़ावा देने के माध्यम से उकसावा होना चाहिए, परंतु वर्तमान प्रकरण में ये सभी घटक अनुपस्थित हैं।



मृतक इस बात से अवसाद में था कि वह अपना व्यवसाय सफलतापूर्वक नहीं चला पा रहा था, वह घाटे में चला गया था और याचिकाकर्तागण से खरीदे गए सामान की राशि का भुगतान नहीं कर पा रहा था। इसलिए, अभिलेख पर याचिकाकर्तागण के विरुद्ध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 306 के अधीन आरोप विरचित करने हेतु पर्याप्त साक्ष्य नहीं हैं, और वे उन्मोचित होने के पात्र हैं। अपने तर्कों के समर्थन में, उन्होंने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया है: 2024 (1) एससीसी 417 मोहित सिंघल विरुद्ध उत्तराखंड राज्य, 2019 (17) एससीसी 301 उदे सिंह विरुद्ध हरियाणा राज्य, 2016 (16) एससीसी 30 प्रभु चावला विरुद्ध राजस्थान राज्य, 2012 (13) एससीसी 614 सतीश मेहरा विरुद्ध राज्य (एनसीटी दिल्ली), 2012 (9) एससीसी 460 अमित कपूर विरुद्ध रमेश चंदेर, 2011 (3) एससीसी 626 एम. मोहन विरुद्ध राज्य, 2010 (1) एससीसी 707 अमलेन्दु पाल विरुद्ध पश्चिम बंगाल राज्य, 2001 (9) एससीसी 618 रमेश कुमार विरुद्ध छत्तीसगढ़ राज्य, 1992 पूरक (1) एससीसी 335 हरियाणा राज्य विरुद्ध भजन लाल, और 1988 (1) एससीसी 692 माधवराव जीवाजीराव सिंधिया विरुद्ध संभाजीराव चंद्रोजीराव आंग्रे।

8. दूसरी ओर, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्तागण के अधिवक्ता द्वारा किए गए तर्कों का विरोध किया और तर्क किया कि आरोप विरचित करते समय और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन आवेदन पर निर्णय लेते समय, केवल प्रथम दृष्टया प्रकरण पर विचार किया जाना चाहिए कि क्या अभियोग-पत्र के साथ संलग्न सामग्री से आरोप विरचित करने और विचारण को आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त साक्ष्य हैं या नहीं। आरोप विरचित करने के चरण में विचारण न्यायालय को साक्ष्यों की सूक्ष्मतापूर्वक परीक्षण करने की आवश्यकता नहीं है। वर्तमान प्रकरण में, याचिकाकर्तागण जो इस अपराध में अभियुक्त हैं के विरुद्ध यह आरोप है कि उन्होंने मृतक को तंग किया और उसके द्वारा खरीदे गए सामान की कीमत चुकाने के बाद भी अधिक राशि की मांग की, जिसके लिए उन्होंने उस पर दबाव बनाया। याचिकाकर्तागण के इस व्यवहार और आचरण के कारण वह अवसाद की ऐसी अवस्था में था कि उसने आत्महत्या कर ली। मृतक की पैंट की जेब से बरामद सुसाइड नोट में याचिकाकर्तागण के खिलाफ आरोप हैं, जो स्पष्ट रूप से उनके कृत्य को दर्शाते हैं और मृतक के लिए आत्महत्या करने की स्थिति उत्पन्न करते हैं। उन्होंने यह भी तर्क किया कि अभियुक्त के कृत्य और घटना के मध्य सन्निकटता के संबंध में कोई अनम्य सूत्र नहीं है, किंतु प्रकरण के वर्तमान तथ्यों और परिस्थितियों में, याचिकाकर्तागण द्वारा विभिन्न दबाव हथकंडों के माध्यम से मृतक को लगातार तंग करना और आसपास के कारक सन्निकट परीक्षण को संतुष्ट करते हैं और आत्महत्या के लिए उकसाने की कोटि में आते हैं। उन्होंने यह भी तर्क किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 (भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 528) की अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग किसी वैध अभियोजन को दबाने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। न्यायालय को साक्ष्यों का सूक्ष्म मूल्यांकन या उनकी विस्तृत जांच करने की आवश्यकता नहीं है; उसके पास केवल यह पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए साक्ष्यों की छंटनी और मूल्यांकन करने की



शक्ति है कि अभियुक्त के खिलाफ प्रथम दृष्टया प्रकरण बनता है या नहीं। इसलिए, याचिका में कोई सार नहीं है और इसे खारिज किया जाना चाहिए।

9. मैंने पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्तागण को सुना और याचिका के साथ प्रस्तुत सामग्री का परिशीलन किया।

10. भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता., 2023 की धारा 528 (दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482) के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते समय, आरोप विरचित करने के चरण में और दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन उन्मोचन हेतु आवेदन पर विचार करते समय, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **मध्य प्रदेश राज्य विरुद्ध दीपक 2019 (13) एससीसी 62** के प्रकरण में सिद्धांत प्रतिपादित किए हैं। जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि आरोप विरचित करने के चरण में, न्यायालय को सामग्री पर केवल इस दृष्टि से विचार करना चाहिए कि क्या यह मानने का आधार है कि अभियुक्त ने अपराध किया है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय को अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और दस्तावेजों का मूल्यांकन इस दृष्टि से करना आवश्यक है कि क्या उनसे उभरने वाले तथ्य, यदि उन्हें ज्यों का त्यों लिया जाए, तो कथित अपराध को गठित करने वाले सभी तत्वों के अस्तित्व का खुलासा करते हैं। आरोप विरचित करने के चरण में, न्यायालय को अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों का सूक्ष्म मूल्यांकन करने और गुण-दोष के आधार पर आरोपों पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है, और न ही यह ज्ञात करना आवश्यक है कि दर्ज किए गए साक्ष्यों के आधार पर दोषसिद्धि की संभावना है या नहीं। **दीपक** (पूर्वोक्त) के प्रकरण में, अपने निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि:-

14- इस न्यायालय के कुछ निर्णयों का संदर्भ देना सुसंगत है। चित्रेश कुमार चोपड़ा विरुद्ध राज्य (एनसीटी दिल्ली) के प्रकरण में, अपीलार्थी और दो अन्य व्यक्तियों पर भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के सहपठित धारा 306 के अधीन आरोप लगाए गए थे। यह आरोप लगाया गया था कि अपीलार्थी और अन्य अभियुक्त व्यक्तियों ने मृतक को बलपूर्वक एक समझौते पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया था, जिसके अधीन उसे कुछ भूमि के विक्रय से होने वाले लाभ में से अपने हिस्से का एक भाग छोड़ना पड़ा था। इसके कारण विवाद उत्पन्न हुआ और मृतक द्वारा मानसिक रूप से तंग किए जाने के परिणामस्वरूप उसने आत्महत्या कर ली। न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा आरोप विरचित किए जाने की पुष्टि की। इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने आत्महत्या के दुष्प्रेरण के अपराध के आवश्यक घटकों को प्रतिपादित किया। न्यायमूर्ति डी.के. जैन ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:



19. जैसा कि रमेश कुमार विरुद्ध छत्तीसगढ़ राज्य [(2001) 9 एससीसी 618 : 2002 एससीसी (दा.) 1088] के प्रकरण में यह अवधारित किया गया है कि, जहाँ अभियुक्त अपने कार्यों द्वारा या आचरण के निरंतर क्रम द्वारा ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर देता है कि मृतक के पास आत्महत्या करने के अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प शेष नहीं रह जाता, वहाँ "उकसावे" का अनुमान लगाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, यह साबित करने के लिए कि अभियुक्त ने किसी व्यक्ति द्वारा आत्महत्या के दुष्प्रेरण का अपराध किया है, निम्नलिखित स्थापित करना आवश्यक है:

(i) अभियुक्त ने शब्दों, कार्यों या जानबूझकर की गई लोप अथवा आचरण द्वारा, जिसमें जानबूझकर साधी गई चुप्पी भी सम्मिलित हो सकती है, मृतक को तब तक चिढ़ाना या परेशान करना जारी रखा जब तक कि मृतक ने प्रतिक्रिया न दी हो, अथवा अपने कार्यों, शब्दों या जानबूझकर किया गया लोप या आचरण द्वारा मृतक को इस प्रकार विवश या बाध्य किया हो कि मृतक और अधिक तेजी से आगे की दिशा में बढ़ने के लिए विवश हो गया हो; तथा

(ii) उपरोक्त रीति से कार्य करते समय अभियुक्त का मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने, प्रेरित करने या प्रोत्साहित करने का आशय था। निस्संदेह, दुराशय की उपस्थिति उकसावे का एक आवश्यक सहवर्ती तत्व है।”

(विशेष बल दिया गया)

15- तथ्यों और परिस्थितियों पर उचित विचार करने के बाद, न्यायालय ने यह पाया कि प्रथम दृष्टया, आत्महत्या के दुष्प्रेरण का अपराध बनता था:—

22. वर्तमान प्रकरण में, ऊपर उद्धृत सुसाइड नोट के अतिरिक्त, विवेचना के दौरान पुलिस द्वारा अभिलिखित कथन यह दर्शाते हैं कि अभियुक्तों जिनमें वर्तमान अपीलार्थी भी सम्मिलित है के साथ व्यावसायिक संव्यवहार के कारण, मृतक पर कुछ ऐसा करने के लिए अत्यधिक दबाव डाला गया था जिसे करने के लिए वह संभवतः तैयार नहीं था। प्रथम दृष्टया, ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी और उसके साथियों का आचरण ऐसा था कि मृतक के पास अपना जीवन समाप्त करने के अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प शेष नहीं बचा था और इसलिए, भारतीय दंड संहिता की धारा 107 का खंड प्रथम आकृष्ट हुआ।

(विशेष बल दिया गया)



16- यह भी उल्लेखनीय कि आरोप विरचित करने के चरण में, न्यायालय को सामग्रियों पर केवल इस दृष्टि से विचार करना होता है कि क्या अभियुक्त द्वारा अपराध किए जाने की "उपधारणा" करने का कोई आधार मौजूद है:

25. यह एक स्थापित सिद्धांत है कि आरोप विरचित करने के चरण में, न्यायालय से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों और दस्तावेजों का मूल्यांकन इस दृष्टि से करे कि क्या उनसे उभरने वाले तथ्य, यदि उन्हें ज्यों का त्यों स्वीकार किया जाए, तो वे कथित अपराध को गठित करने वाले सभी आवश्यक घटकों के अस्तित्व को प्रकट करते हैं। इस सीमित उद्देश्य के लिए, न्यायालय साक्ष्यों की छंटनी कर सकता है क्योंकि प्रारंभिक चरण में भी न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह अभियोजन द्वारा कही गई हर बात को परम सत्य मान ले। इस चरण पर, न्यायालय को सामग्री पर केवल इस दृष्टि से विचार करना चाहिए कि क्या यह उपधारणा करने का आधार मौजूद है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, न कि इस उद्देश्य से कि यह प्रकरण दोषसिद्धि तक ले जाने की संभावना है या नहीं। "

17- राजबीर सिंह विरुद्ध उत्तर प्रदेश राज्य 8 (2006) 4 एससीसी 51 के प्रकरण में इस न्यायालय की एक दो-न्यायाधीशों की पीठ ने यह उल्लेख किया कि धारा 227 के अनुसार, उच्च न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि क्या "अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं" या अपराध किए जाने की "उपधारणा" करने का आधार है कि अपराध किया गया है। न्यायमूर्ति जी. पी. माथुर ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया:

"9. स्त्री अत्याचार विरोधी परिषद विरुद्ध दिलीप नत्थूमल चोरडिया के प्रकरण में, धारा 227 के परिधि का परीक्षण करते हुए न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

'14... धारा 227 में स्वयं अभियुक्त को उन्मोचित करने के प्रयोजनार्थ की जाने वाली जांच के परिधि के संबंध में पर्याप्त दिशा-निर्देश निहित हैं। यह प्रावधान करता है कि 'न्यायाधीश तब उन्मोचित करेगा जब वह यह मानता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है'। इस संदर्भ में 'आधार' का अर्थ दोषसिद्धि का आधार नहीं, बल्कि अभियुक्त पर विचारण चलाने का आधार है। अभियुक्त के दोष या निर्दोष होने का निर्धारण विचारण के दौरान किया जाएगा, न कि आरोप विरचित करने के समय। इसलिए, न्यायालय को साक्ष्यों की छंटनी और मूल्यांकन में विस्तृत जांच करने



की आवश्यकता नहीं है। न ही विभिन्न पहलुओं की गहराई से जांच करना आवश्यक है। न्यायालय को केवल इस बात पर विचार करना है कि क्या अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य सामग्री, यदि उसे सामान्य रूप से स्वीकार कर लिया जाए, तो वह अभियुक्त को अपराध से युक्तियुक्त रूप से जोड़ती है।

10. उच्च न्यायालय ने सुसंगत परीक्षण को बिल्कुल भी लागू नहीं किया, अर्थात्, क्या अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं या क्या यह उपधारणा करने का आधार है कि अभियुक्त ने अपराध किया है। यदि उत्तर सकारात्मक है, तो उन्मोचन का आदेश पारित नहीं किया जा सकता और अभियुक्त को विचारण का सामना करना होगा। उच्च न्यायालय ने केवल यह अवधारित करने के बाद कि 'चूंकि गोलीबारी अन्य व्यक्तियों पर लक्षित थी और दुर्घटनावश मृतक पूजा वाल्मीकि उस रास्ते से गुजर रही थी और उसे गोली लग गई' और आगे यह अवधारित करते हुए कि 'आवेदक का न तो मृतक को मारने का आशय था और न ही उसे इस कारण से लक्षित किया गया था कि वह अनुसूचित जाति की थी', उस आदेश को अपास्त किया जिसके द्वारा उत्तरवादी 2 के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए थे। इसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 301 के प्रावधानों की पूरी तरह से अनदेखी की गई है और आरोप विरचित करने का निर्देश देने वाले विद्वान विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश की वैधता को परखने के सुसंगत मानदंडों को लागू नहीं किया गया है। अतः, आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण है एवं अपास्त किए जाने योग्य है।"

(विशेष बल दिया गया)

11. मनजीत सिंह विरदी विरुद्ध हुसैन मोहम्मद शत्ताफ 2023 (7) एससीसी 633 के प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय के कण्डिका 12 में यह अभिनिर्धारित किया है कि:-

12- इस बिंदु पर विधि को इस न्यायालय के एक हालिया निर्णय, राजस्थान राज्य विरुद्ध अशोक कुमार कश्यप में संक्षिप्त किया गया है। सुसंगत कण्डिका नीचे उद्धृत हैं: -

"11.1. पी. विजयन विरुद्ध केरल राज्य, (2010) 2 एससीसी 398 में, इस न्यायालय को द.प्र.सं. की धारा 227 पर विचार करने का अवसर मिला था। उक्त निर्णय में इस तथ्य पर विस्तारपूर्वक विचार किया गया है कि आरोप विरचित करने और/या उन्मोचन के आवेदन पर विचार करते समय किन तथ्यों पर गौर किया जाना आवश्यक है। यह अवधारित और अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 227 के चरण में, न्यायाधीश को केवल साक्ष्यों की छंटनी करनी होती है ताकि यह ज्ञात किया जा सके कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार हैं या नहीं। यह अवधारित किया गया है कि दूसरे शब्दों में, 'आधारों की



पर्याप्तता' के दायरे में पुलिस द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्य की प्रकृति या न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए वे दस्तावेज आएं जो प्रथम दृष्टया अभियुक्त के विरुद्ध ऐसी संदिग्ध परिस्थितियों को प्रकट करते हैं जिससे उसके विरुद्ध आरोप विरचित किया जा सके। आगे यह अवधारित किया गया है कि यदि न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं, तो वह द.प्र.सं. की धारा 228 के अधीन आरोप विरचित करेगा, अन्यथा, यदि नहीं तो वह अभियुक्त को उन्मोचित कर देगा। यह भी अवधारित किया गया है कि प्रकरण के तथ्य पर अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करते हुए 2 (2021) 11 एससीसी 191 दायिका अपील क्रमांक 1399/2023, यह अवधारित करने के लिए कि क्या अभियोजन द्वारा विचारण हेतु प्रकरण बनाया गया है, न्यायालय के लिए प्रकरण के पक्ष-विपक्ष में जाना या साक्ष्यों और संभावनाओं का ऐसा विस्तृत मूल्यांकन और संतुलन करना आवश्यक नहीं है, जो वास्तव में विचारण प्रारंभ होने के बाद न्यायालय का कार्य होता है।

11.2. इस न्यायालय के हालिया निर्णय, कर्नाटक राज्य विरुद्ध एम.आर. हीरेमठ, (2019) 7 एससीसी 515 में, हममें से एक (न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड़) ने पीठ की ओर से व्यक्त करते हुए कण्डिका 25 में इस प्रकार अवधारित और अभिनिर्धारित किया है: -

“25. उच्च न्यायालय [एम.आर. हीरेमठ विरुद्ध राज्य, 2017 एससीसी आनलाइन कर 4970] को इस तथ्य के प्रति सचेत रहना चाहिए था कि विचारण न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के प्रावधानों के अधीन उन्मोचन के आवेदन पर विचार कर रही थी। इस अधिकारिता के प्रयोग को नियंत्रित करने वाले मानक इस न्यायालय के कई निर्णयों में व्यक्त किए गए हैं। यह विधि का एक स्थापित सिद्धांत है कि उन्मोचन के आवेदन पर विचार करते समय, न्यायालय को इस धारणा पर आगे बढ़ना चाहिए कि अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लाई गई सामग्री सत्य है, और उस सामग्री का मूल्यांकन यह निर्धारित करने के लिए करना चाहिए कि क्या उस सामग्री से उभरने वाले तथ्य, ज्यों के त्यों, अपराध गठित करने के लिए आवश्यक घटकों के अस्तित्व को प्रकट करते हैं। तमिलनाडु राज्य विरुद्ध एन. सुरेश राजन, (2014) 11 एससीसी 709 में, इस विषय पर पूर्ववर्ती निर्णयों का उल्लेख करते हुए, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:-

“29. ... इस स्तर पर, सामग्रियों के साक्ष्यिक मूल्य की जांच की जानी चाहिए और न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह प्रकरण की गहराई में जाए और यह अभिनिर्धारित करे कि सामग्री दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त नहीं होगी। हमारी राय में, जिस बात पर विचार करने की आवश्यकता है वह यह है कि क्या यह मानने का आधार मौजूद है कि अपराध किया गया है, न कि यह कि अभियुक्त की दोषसिद्धि का आधार बनता है या नहीं। इसे अलग तरह से कहें तो, यदि न्यायालय को प्रतीत होता है कि अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों



के साक्ष्यिक मूल्य के आधार पर अभियुक्त ने अपराध किया हो, तो वह आरोप विरचित कर सकती है; हालाँकि दोषसिद्धि के लिए, न्यायालय को इस निष्कर्ष पर पहुँचना होता है कि अभियुक्त ने ही अपराध कारित किया है। विधि इस स्तर पर लघु विचारण की अनुमति नहीं देता है।”

12. इसके अतिरिक्त, राज्य द्वारा पुलिस अधीक्षक, एसपीई, सीबीआई विरुद्ध उत्तमचंद बोहरा, 2022 (16) एससीसी 663 के प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय के कण्डिका 21 में यह अभिनिर्धारित किया है कि:-

21- सीबीआई विरुद्ध के. नारायण राव में इस न्यायालय ने, दाण्डिक प्रकरण में अभियुक्त के उन्मोचन से संबंधित लागू मानकों के प्रश्न पर विचार किया गया था उन पूर्ववर्ती निर्णयों का पुनर्विलोकन करने के उपरांत, सिद्धांतों को निम्नलिखित शब्दों में संक्षेपित किया है:-

“12. रमेश सिंह के प्रकरण में प्रथम निर्णय, अभियुक्त को उन्मोचित करने या विचारण के साथ आगे बढ़ने के विचार हेतु संहिता की धारा 227 और 228 की व्याख्या से संबंधित है। उक्त निर्णय के कण्डिका 4 का संदर्भ लिया गया है, जो निम्नानुसार है:-

4. संहिता की धारा 226 के अधीन अभियोजन का प्रकरण शुरू करते समय, अभियोजक को अभियुक्त के विरुद्ध आरोपों का विवरण देना होता है और यह बताना होता है कि वह किन साक्ष्यों के माध्यम से अभियुक्त के दोष को साबित करने का प्रस्ताव करता है। तत्पश्चात, प्रारंभिक चरण में न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह प्रकरण के अभिलेख और उसके साथ प्रस्तुत दस्तावेजों पर विचार करे तथा इस संबंध में अभियुक्त और अभियोजन के तर्कों को सुने। इसके बाद न्यायाधीश को संहिता की धारा 227 या धारा 228 के अधीन आदेश पारित करना होता है। जैसा कि धारा 227 द्वारा अनिवार्य किया गया है, यदि "न्यायाधीश को लगता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, तो वह अभियुक्त को उन्मोचित करेगा और ऐसा करने के कारणों को अभिलिखित करेगा"। दूसरी ओर, यदि "न्यायाधीश की यह राय है कि यह उपधारणा करने का आधार है कि अभियुक्त ने ऐसा अपराध किया है जो (ख) विशेष रूप से न्यायालय द्वारा विचारणीय है, तो वह अभियुक्त के विरुद्ध लिखित रूप में आरोप विरचित करेगा", जैसा कि धारा 228 में प्रावधान है। इन दोनों प्रावधानों को एक साथ मिलाकर पठन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि विचारण की शुरुआत और प्रारंभिक चरण में, उस साक्ष्य की सत्यता, विश्वसनीयता और प्रभाव का जिसे अभियोजक प्रस्तुत करने का प्रस्ताव करता है सूक्ष्मता से न्यायनिर्णयन नहीं किया जाना चाहिए। न ही अभियुक्त के संभावित बचाव को कोई महत्व दिया जाना चाहिए। विचारण के इस चरण में न्यायाधीश के लिए यह अनिवार्य नहीं है कि वह विस्तार से विचार करे और संवेदनशील तराजू पर तौले कि क्या तथ्य, यदि साबित हो जाते हैं, तो वे अभियुक्त की निर्दोषता के साथ असंगत



होंगे या नहीं। दोषसिद्धि या अन्यथा निर्णय लेने से पहले अंततः लागू किए जाने वाले परीक्षण और निर्णय के मानक को धारा 227 या 228 के अधीन प्रकरण का निर्णय करते समय ठीक उसी रूप में लागू नहीं किया जाना चाहिए। उस चरण पर न्यायालय को यह नहीं देखना होता है कि क्या अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त आधार हैं या क्या विचारण निश्चित रूप से उसकी दोषसिद्धि में समाप्त होगा। अभियुक्त के विरुद्ध प्रबल संदेह, यदि प्रकरण केवल संदेह के घेरे में रहता है, तो विचारण के अंत में उसके दोष के प्रमाण का स्थान नहीं ले सकता। परंतु, प्रारंभिक चरण में यदि कोई प्रबल संदेह है जो न्यायालय को यह सोचने के लिए प्रेरित करता है कि यह उपधारणा करने का आधार है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, तो न्यायालय के लिए यह कहना संभव नहीं है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है। प्रारंभिक चरण में अभियुक्त के दोष की जो उपधारणा की जानी है, वह फ्रांस के दायित्व प्रकरणों के विचारण के विधि के अर्थ में नहीं है, जहाँ अभियुक्त को तब तक दोषी माना जाता है जब तक कि इसके विपरीत साबित न हो जाए। बल्कि यह केवल प्रथम दृष्टया यह तय करने के प्रयोजन से है कि क्या न्यायालय को विचारण के साथ आगे बढ़ना चाहिए या नहीं। यदि वह साक्ष्य जिसे अभियोजक अभियुक्त का दोष को साबित करने के लिए प्रस्तुत करने का प्रस्ताव करता है, प्रति-परीक्षण द्वारा चुनौती दिए जाने या बचाव पक्ष के साक्ष्य द्वारा खंडन किए जाने से पहले, यदि पूर्णतः स्वीकार कर लिया जाए और फिर भी वह यह नहीं दर्शाता कि अभियुक्त ने अपराध कारित किया है, तो विचारण को आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त आधार नहीं होगा। उन परिस्थितियों की एक विस्तृत सूची देना संभव या उचित नहीं है जो एक या दूसरे निष्कर्ष की ओर ले जाएँ। हम विधि के इस अंतर को एक और उदाहरण से स्पष्ट कर सकते हैं। यदि विचारण के अंत में अभियुक्त के दोष या निर्दोषता के तराजू के पलड़े लगभग बराबर हैं, तो संदेह के लाभ के सिद्धांत पर प्रकरण उसकी दोषमुक्ति में समाप्त होगा। किंतु यदि, दूसरी ओर, धारा 227 या 228 के अधीन आदेश देते समय स्थिति ऐसी ही है, तो सामान्यतः और मुख्य रूप से जो आदेश दिया जाना चाहिए वह धारा 228 के अधीन होगा न कि धारा 227 के अधीन।

13. इस न्यायालय द्वारा पी. विजयन के प्रकरण में संहिता की धारा 227 के अधीन अभियुक्त के उन्मोचन पर व्यापक रूप से विचार किया गया था, जिसमें निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था:—

'10. ...यदि दो विचार संभव हैं और उनमें से एक केवल संदेह उत्पन्न करता है, जो कि गंभीर संदेह से भिन्न है, तो विचारण न्यायाधीश को अभियुक्त को उन्मोचित करने का अधिकार होगा; और इस स्तर पर उसे यह नहीं देखना है कि विचारण दोषसिद्धि में समाप्त होगा या दोषमुक्ति में। इसके अतिरिक्त, "अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार नहीं" शब्द स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि न्यायाधीश अभियोजन के कहने पर केवल आरोप विरचित करने वाला कोई



डाकघर नहीं है, बल्कि उसे प्रकरण के तथ्यों पर अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करना होगा ताकि यह अवधारित किया जा सके कि क्या अभियोजन द्वारा विचारण के लिए प्रकरण बनाया गया है। इस तथ्य का आकलन करते समय, न्यायालय के लिए प्रकरण के पक्ष-विपक्ष में जाना या साक्ष्यों और संभावनाओं का तौलना और संतुलन करना आवश्यक नहीं है, जो कि वास्तव में विचारण शुरू होने के बाद न्यायालय का कार्य है।

11. धारा 227 के चरण पर, न्यायाधीश को केवल साक्ष्यों की छंटनी करनी होती है ताकि यह ज्ञात किया जा सके कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। दूसरे शब्दों में, आधार की पर्याप्तता के दायरे में पुलिस द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्य की प्रकृति या न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत दस्तावेज आएंगे, जो प्रथम दृष्टया यह प्रकट करते हैं कि अभियुक्त के विरुद्ध संदिग्ध परिस्थितियाँ हैं, जिससे उसके विरुद्ध आरोप विरचित किया जा सके।'

14. इन्हीं समान प्रावधानों, अर्थात् आरोपों विरचित करने और अभियुक्त के उन्मोचन पर विचार करते हुए, पुनः सज़न कुमार के प्रकरण में इस न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया: —

19. यह स्पष्ट है कि प्रारंभिक चरण में, यदि कोई प्रबल संदेह है जो न्यायालय को यह सोचने के लिए प्रेरित करता है कि यह उपधारणा करने का आधार है कि अभियुक्त ने अपराध कारित किया है, तो न्यायालय के लिए यह कहना संभव नहीं है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है। प्रारंभिक चरण में अभियुक्त के दोष की जो उपधारणा की जानी है, वह केवल प्रथम दृष्टया यह तय करने के उद्देश्य से है कि क्या न्यायालय को विचारण के साथ आगे बढ़ना चाहिए या नहीं। यदि वह साक्ष्य जिसे अभियोजन प्रस्तुत करने का प्रस्ताव करता है, प्रतिपरीक्षण द्वारा चुनौती दिए जाने या बचाव पक्ष के साक्ष्य द्वारा खंडन किए जाने से पहले, पूर्णतः स्वीकार कर लिए जाने पर भी यह नहीं दर्शाता कि अभियुक्त ने अपराध कारित किया है, तो विचारण को आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त आधार नहीं होगा।

20. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के अधीन प्रकरण की जांच करने वाला मजिस्ट्रेट केवल डाकघर के रूप में कार्य नहीं करेगा, बल्कि उसे इस निष्कर्ष पर पहुंचना होगा कि उसके समक्ष प्रकरण अभियुक्त को सत्र न्यायालय में उपार्पित करने के लिए उपयुक्त है या नहीं। वह अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों की छंटनी और मूल्यांकन करने का हकदार है, किंतु केवल यह देखने के लिए कि क्या उपार्पण के लिए पर्याप्त साक्ष्य हैं, न कि यह देखने के लिए कि क्या दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त साक्ष्य हैं। यदि कोई प्रथम दृष्टया साक्ष्य नहीं है या साक्ष्य पूरी तरह से अविश्वसनीय है, तो मजिस्ट्रेट का यह कर्तव्य है कि वह अभियुक्त को उन्मोचित कर दे; दूसरी ओर, यदि कुछ ऐसे साक्ष्य हैं जिन पर उचित रूप से दोषसिद्धि आधारित हो सकती है, तो उसे प्रकरण उपार्पित करना चाहिए। यह भी स्पष्ट है कि धारा 227 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते समय,



मजिस्ट्रेट को प्रकरण के पक्ष-विपक्ष की विस्तृत जांच नहीं करनी चाहिए और साक्ष्यों को इस तरह नहीं तौलना चाहिए जैसे कि वह विचारण संचालित कर रहा हो।

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 और 228 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग

21. संहिता की धारा 227 और 228 के दायरे के संबंध में न्यायिक निर्णयों पर विचार करने के बाद, निम्नलिखित सिद्धांत उभर कर सामने आते हैं:

(i) दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन आरोप विरचित करने के प्रश्न पर विचार करते समय, न्यायाधीश के पास साक्ष्यों की छंटनी और मूल्यांकन करने की निर्विवाद शक्ति है, किंतु यह केवल निष्कर्ष के सीमित प्रयोजन के लिए है कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया प्रकरण बनता है या नहीं। प्रथम दृष्टया प्रकरण को निर्धारित करने का परीक्षण प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों पर निर्भर करेगा।

(ii) जहाँ न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध गंभीर संदेह उत्पन्न करती है, जिसका उचित स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है, वहाँ न्यायालय आरोप विरचित करने और विचारण के साथ आगे बढ़ने के लिए पूर्णतः न्यायसंगत होगा।

(iii) न्यायालय केवल अभियोजन के डाकघर या मुखपत्र के रूप में कार्य नहीं कर सकता है, बल्कि उसे प्रकरण की व्यापक संभावनाओं, साक्ष्यों के कुल प्रभाव और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत दस्तावेजों, किसी भी बुनियादी दोषों आदि पर विचार करना होगा। हालांकि, इस स्तर पर प्रकरण के पक्ष-विपक्ष की कोई विस्तृत जांच नहीं की जा सकती और न ही साक्ष्यों को इस तरह तौला जा सकता है जैसे कि विचारण संचालित किया जा रहा हो।

(iv) यदि अभिलेख पर मौजूद सामग्री के आधार पर न्यायालय यह राय बना सकता है कि अभियुक्त ने अपराध किया होगा, तो वह आरोप विरचित कर सकता है; भले ही दोषसिद्धि के लिए यह निष्कर्ष निकालना आवश्यक हो कि यह बिना किसी युक्तियुक्त संदेह के साबित हो कि अभियुक्त ने ही अपराध कारित किया है।

(v) आरोप विरचित करते समय, अभिलेख पर मौजूद सामग्री के साक्ष्यिक मूल्य की गहराई में नहीं जाया जा सकता, किंतु आरोप विरचित करने से पूर्व न्यायालय को अभिलेख पर रखी गई सामग्री पर अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करना चाहिए और संतुष्ट होना चाहिए कि अभियुक्त द्वारा अपराध किया जाना संभव था।

(vi) धारा 227 और 228 के स्तर पर, न्यायालय को अभिलेख पर मौजूद सामग्री और दस्तावेजों का मूल्यांकन इस दृष्टि से करना आवश्यक है कि क्या उनसे उभरने वाले तथ्य यदि उन्हें ज्यों का त्यों स्वीकार किया जाए कथित अपराध को गठित करने वाले सभी आवश्यक घटकों की उपस्थिति को प्रकट करते हैं। इस सीमित प्रयोजन के लिए साक्ष्यों की छंटनी की जा



सकती है, क्योंकि प्रारंभिक चरण में भी अभियोजन द्वारा कही गई हर बात को परम सत्य के रूप में स्वीकार करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती, विशेषकर तब जब वह सामान्य ज्ञान या प्रकरण की व्यापक संभावनाओं के विपरीत हो।

(vii) यदि दो विचार संभव हैं और उनमें से एक केवल संदेह उत्पन्न करता है, जो कि गंभीर संदेह से भिन्न है, तो विचारण न्यायाधीश को अभियुक्त को उन्मोचित करने का अधिकार होगा; और इस चरण पर उसे यह नहीं देखना है कि विचारण का अंत दोषसिद्धि में होगा या दोषमुक्ति में।"

13. एन. सुंदरम विरुद्ध पी.के. पौनराज व एक अन्य, (2014) 10 एससीसी 616 में प्रकाशित, प्रकरण में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कण्डिका 13 में यह अभिनिर्धारित किया है कि:

"13. इस न्यायालय द्वारा निर्णयों की एक श्रृंखला में यह सुस्थापित है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन शक्तियों का प्रयोग किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए विरलतम और सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। [देखें: हरियाणा राज्य विरुद्ध भजन लाल]। अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग किसी वैध अभियोजन का गला घोटने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय को तब तक प्रथम दृष्टया निर्णय देने से बचना चाहिए जब तक कि ऐसा करने के लिए बाध्यकारी परिस्थितियाँ न हों। आरोपों और शिकायत को उनके मूल रूप में लेते हुए, बिना कुछ जोड़े या घटाए, यदि कोई अपराध नहीं बनता है, केवल तभी उच्च न्यायालय दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए कार्यवाही को अभिखण्डित करने के लिए न्यायसंगत होगा। [देखें: एम.सी.डी. विरुद्ध राम किशन रोहतगी]। यदि आरोपों में कुछ सार हैं, तो जांच को प्रारंभिक स्तर में ही बंद नहीं किया जाना चाहिए।" [देखें: विनोद रघुवंशी विरुद्ध अजय अरोरा]

14. माननीय उच्चतम न्यायालय ने गुजरात राज्य विरुद्ध दिलीपसिंह किशोरसिंह राव, 2023 एससीसी आनलाइन एससी 1294 के प्रकरण में अपने निर्णय की कण्डिका 12 में आगे यह अभिनिर्धारित किया है कि:—

"12. आरोप विरचित करने के चरण में प्राथमिक विचार प्रथम दृष्टया प्रकरण के अस्तित्व का परीक्षण है, और इस चरण में अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों के साक्ष्यिक मूल्य की जांच करने की आवश्यकता नहीं होती है। इस न्यायालय ने महाराष्ट्र राज्य विरुद्ध सोमनाथ थापा (1996) 4 एससीसी 659 और मध्य प्रदेश राज्य विरुद्ध मोहन लाल सोनी (2000) 6 एससीसी 338 में अपने पूर्ववर्ती निर्णयों का संदर्भ देते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि आरोप विरचित करने के चरण में न्यायालय द्वारा किए जाने वाले मूल्यांकन की प्रकृति, प्रथम दृष्टया प्रकरण के अस्तित्व का परीक्षण करना है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि आरोप विरचित करने के चरण में, न्यायालय को कथित अपराध को गठित करने वाले तथ्यात्मक घटकों के अस्तित्व के



संबंध में एक अनुमानित राय बनानी होती है; न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वह अभिलेख पर मौजूद सामग्री के साक्ष्यिक मूल्य की गहराई से जांच करे या यह देखे कि क्या अभिलेख पर मौजूद सामग्री निश्चित रूप से विचारण के निष्कर्ष पर दोषसिद्धि की ओर ले जाएगी।"

15. दिल्ली राज्य (एनसीटी) विरुद्ध शिव चरण बंसल व अन्य, 2020 (2) एससीसी 290 के प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि आरोप विरचित करने के चरण में, विचारण न्यायालय के लिए साक्ष्यों का सूक्ष्म मूल्यांकन या उनकी विस्तृत जांच करना आवश्यक नहीं है। न्यायालय के पास साक्ष्यों की छंटनी और तौल करने की शक्ति केवल इस सीमित प्रयोजन के लिए है कि वह यह ज्ञात कर सके कि अभियुक्त के विरुद्ध विचारण को आगे बढ़ाने के लिए प्रथम दृष्टया प्रकरण बनता है या नहीं।

16. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित उपरोक्त निर्णयों के आलोक में और वर्तमान प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों के अंतर्गत, ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्तागण के विरुद्ध यह आरोप है कि उनके निरंतर आचरण के कारण ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुईं कि मृतक के पास आत्महत्या करने के अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प शेष नहीं रहा, जिससे उकसावे का अनुमान लगाया जा सकता है। याचिकाकर्तागण/अभियुक्त व्यक्तियों ने मृतक को निरंतर परेशान करते और चिढ़ाते रहे, जिसने उसे आत्महत्या जैसा कठोर कदम उठाने के लिए विवश कर दिया। वर्तमान प्रकरण में, मृतक के पुत्र जावेद मोहम्मद कुरैशी, मृतक की पत्नी श्रीमती अनवारी बेगम और अन्य साक्षियों अकबर खान के कथनों से, तथा मृतक की पैंट की जेब से बरामद सुसाइड नोट से, आरोप विरचित करने और प्रकरण के विचारण को आगे बढ़ाने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन प्रथम दृष्टया अपराध स्पष्ट रूप से बनता है। मृतक की पैंट की जेब से बरामद सुसाइड नोट स्पष्ट रूप से उनके निरंतर आचरण और मृतक को दी गई उस परेशानी को दर्शाता है जिसके अंतर्गत उसने आत्महत्या की। यह केवल ऐसा साधारण प्रकरण नहीं है कि याचिकाकर्ता मृतक से बकाया राशि की मांग कर रहे थे, बल्कि वर्तमान प्रकरण में मृतक पर दबाव बनाने और उसे परेशान करने तथा चिढ़ाने संबंधी आरोप हैं।

17. याचिकाकर्तागण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय तथ्यों के आधार पर भिन्न हैं, और इसलिए उन निर्णयों से याचिकाकर्तागण को कोई लाभ नहीं दिया जा सकता है। किसी व्यक्ति ने दूसरे को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया है या नहीं, यह केवल प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों से ही समझा जा सकता है। यदि अभियुक्त अपने शब्दों या कार्यों से मृतक को तब तक चिढ़ता या परेशान करता रहा जब तक कि मृतक ने प्रतिक्रिया नहीं दी, तो वह विशेष प्रकरण प्रथम दृष्टया आत्महत्या के दुष्प्रेरण का हो सकता है, और ऐसे मानवीय व्यवहार का परीक्षण उसके स्वयं के तथ्यों पर किया जाना आवश्यक है। इसके लिए उन सभी आसपास के कारकों पर ध्यान देना होगा जिनका अभियुक्त व्यक्तियों और साथ ही मृतक के कार्यों और मानसिकता पर प्रभाव पड़ता है।



18. वर्तमान प्रकरण में, अभियोग-पत्र के साथ संलग्न सामग्री और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों पर विचार करने के बाद, विचारण न्यायालय ने उचित निष्कर्ष निकाला है कि आरोप विरचित करने और विचारण को आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं एवं न्यायालय ने याचिकाकर्तागण द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन प्रस्तुत आवेदन को खारिज कर दिया है, जिसे न तो प्रतिकूल कहा जा सकता है और न ही प्रकरण के तथ्यों के विपरीत, जिसके लिए इस न्यायालय को भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 528 के अधीन प्रदत्त असाधारण अधिकारिता का आह्वान करते हुए हस्तक्षेप करने की आवश्यकता हो।

19. फलस्वरूप, याचिका सारहीन होने से खारिज किए जाने योग्य है तथा यह एतद्द्वारा खारिज की जाती है।

सही/-
(रवींद्र कुमार अग्रवाल)
न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।